रामचरित्मानस

बालकाण्ड

पार्वती का जन्म और तपस्या

***सतीं मरत हरि सन बरु मागा। जनम जनम सिव पद अनुरागा॥ तेहि कारन हिमगिरि गृह जाई। जनमीं पारबती तनु पाई॥3॥

भावार्थ:

सती ने मरते समय भगवान हरि से यह वर माँगा कि मेरा जन्म-जन्म में शिवजी के चरणों में अनुराग रहे। इसी कारण उन्होंने हिमाचल के घर जाकर पार्वती के शरीर से जन्म लिया॥3॥

***जब तें उमा सैल गृह जाईं। सकल सिद्धि संपति तहँ छाईं॥ जहँ तहँ मुनिन्ह सुआश्रम कीन्हे। उचित बास हिम भूधर दीन्हे॥4॥

भावार्थ:

जब से उमाजी हिमाचल के घर जन्मीं, तबसे वहाँ सारी सिद्धियाँ और सम्पत्तियाँ छा गईं। मुनियों ने जहाँ-तहाँ सुंदर आश्रम बना लिए और हिमाचल ने उनको उचित स्थान दिए॥4॥

दोहा :

*** सदा सुमन फल सहित सब द्रुम नव नाना जाति। प्रगटीं सुंदर सैल पर मनि आकर बहु भाँति॥65॥

भावार्थ:

उस सुंदर पर्वत पर बहुत प्रकार के सब नए-नए वृक्ष सदा पुष्प-फलयुक्त हो गए और वहाँ बहुत तरह की मणियों की खानें प्रकट हो गईं॥65॥

चौपाई :

*** सरिता सब पुनीत जलु बहहीं। खग मृग मधुप सुखी सब रहहीं॥ सहज बयरु सब जीवन्ह त्यागा। गिरि पर सकल करहिं अनुरागा॥1॥

भावार्थ:

सारी नदियों में पवित्र जल बहता है और पक्षी, पशु, भ्रमर सभी सुखी रहते हैं। सब जीवों ने अपना स्वाभाविक बैर छोड़ दिया और पर्वत पर सभी परस्पर प्रेम करते हैं॥1॥

*** सोह सैल गिरिजा गृह आएँ। जिमि जनु रामभगति के पाएँ॥ नित नूतन मंगल गृह तासू। ब्रह्मादिक गावहिं जसु जासू॥2॥

भावार्थ:

पार्वतीजी के घर आ जाने से पर्वत ऐसा शोभायमान हो रहा है जैसा रामभक्ति को पाकर भक्त शोभायमान होता है। उस (पर्वतराज) के घर नित्य नए-नए मंगलोत्सव होते हैं, जिसका ब्रह्मादि यश गाते हैं॥2॥

*** नारद समाचार सब पाए। कोतुकहीं गिरि गेह सिधाए॥ सैलराज बड़ आदर कीन्हा। पद पखारि बर आसनु दीन्हा॥3॥

भावार्थ:

जब नारदजी ने ये सब समाचार सुने तो वे कौतुक ही से हिमाचल के घर पधारे। पर्वतराज ने उनका बड़ा आदर किया और चरण धोकर उनको उत्तम आसन दिया॥3॥

*** नारि सहित मुनि पद सिरु नावा। चरन सलिल सबु भवनु सिंचावा॥ निज सौभाग्य बहुत गिरि बरना। सुता बोलि मेली मुनि चरना॥4॥

भावार्थ:

फिर अपनी स्त्री सहित मुनि के चरणों में सिर नवाया और उनके चरणोदक को सारे घर में छिड़काया। हिमाचल ने अपने सौभाग्य का बहुत बखान किया और पुत्री को बुलाकर मुनि के चरणों पर डाल दिया॥4॥

दोहा :

*** त्रिकालग्य सर्बग्य तुम्ह गति सर्बत्र तुम्हारि। कहहु सुता के दोष गुन मुनिबर हृदयँ बिचारि॥66॥

भावार्थ:

(और कहा-) हे मुनिवर! आप त्रिकालज्ञ और सर्वज्ञ हैं, आपकी सर्वत्र पहुँच है। अतः आप हृदय में विचार कर कन्या के दोष-गुण कहिए॥66॥

चौपाई :

*** कह मुनि बिहसि गूढ़ मृदु बानी। सुता तुम्हारि सकल गुन खानी॥ सुंदर सहज सुसील सयानी। नाम उमा अंबिका भवानी॥1॥

भावार्थ:

नारद मुनि ने हँसकर रहस्ययुक्त कोमल वाणी से कहा- तुम्हारी कन्या सब गुणों की खान है। यह स्वभाव से ही सुंदर, सुशील और समझदार है। उमा, अम्बिका और भवानी इसके नाम हैं॥1॥

*** सब लच्छन संपन्न कुमारी। होइहि संतत पियहि पिआरी॥ सदा अचल एहि कर अहिवाता। एहि तें जसु पैहहिं पितु माता॥2॥

भावार्थ:

कन्या सब सुलक्षणों से सम्पन्न है, यह अपने पति को सदा प्यारी होगी। इसका सुहाग सदा अचल रहेगा और इससे इसके माता-पिता यश पावेंगे॥2॥

*** होइहि पूज्य सकल जग माहीं। एहि सेवत कछु दुर्लभ नाहीं॥ एहि कर नामु सुमिरि संसारा। त्रिय चढ़िहहिं पतिब्रत असिधारा॥3॥

भावार्थ:

यह सारे जगत में पूज्य होगी और इसकी सेवा करने से कुछ भी दुर्लभ न होगा। संसार में स्त्रियाँ इसका नाम स्मरण करके पतिव्रता रूपी तलवार की धार पर चढ़ जाएँगी॥3॥

*** सैल सुलच्छन सुता तुम्हारी। सुनहु जे अब अवगुन दुइ चारी॥ अगुन अमान मातु पितु हीना। उदासीन सब संसय छीना॥4॥

भावार्थ:

हे पर्वतराज! तुम्हारी कन्या सुलच्छनी है। अब इसमें जो दो-चार अवगुण हैं, उन्हें भी सुन लो। गुणहीन, मानहीन, माता-पिताविहीन, उदासीन, संशयहीन (लापरवाह)॥4॥

दोहा :

*** जोगी जटिल अकाम मन नगन अमंगल बेष। अस स्वामी एहि कहँ मिलिहि परी हस्त असि रेख॥67॥

भावार्थ:

योगी, जटाधारी, निष्काम हृदय, नंगा और अमंगल वेष वाला, ऐसा पति इसको मिलेगा। इसके हाथ में ऐसी ही रेखा पड़ी है॥67॥

चौपाई :

*** सुनि मुनि गिरा सत्य जियँ जानी। दुख दंपतिहि उमा हरषानी॥ नारदहूँ यह भेदु न जाना। दसा एक समुझब बिलगाना॥1॥

भावार्थ:

नारद मुनि की वाणी सुनकर और उसको हृदय में सत्य जानकर पति-पत्नी (हिमवान् और मैना) को दुःख हुआ और पार्वतीजी प्रसन्न हुईं। नारदजी ने भी इस रहस्य को नहीं जाना, क्योंकि सबकी बाहरी दशा एक सी होने पर भी भीतरी समझ भिन्न-भिन्न थी॥1॥

*** सकल सखीं गिरिजा गिरि मैना। पुलक सरीर भरे जल नैना॥ होइ न मृषा देवरिषि भाषा। उमा सो बचनु हृदयँ धरि राखा॥2॥

भावार्थ:

सारी सखियाँ, पार्वती, पर्वतराज हिमवान् और मैना सभी के शरीर पुलकित थे और सभी के नेत्रों में जल भरा था। देवर्षि के वचन असत्य नहीं हो सकते, (यह विचारकर) पार्वती ने उन वचनों को हृदय में धारण कर लिया॥2॥

*** उपजेउ सिव पद कमल सनेहू। मिलन कठिन मन भा संदेहू॥ जानि कुअवसरु प्रीति दुराई। सखी उछँग बैठी पुनि जाई॥3॥

भावार्थ:

उन्हें शिवजी के चरण कमलों में स्नेह उत्पन्न हो आया, परन्तु मन में यह संदेह हुआकि उनका मिलना कठिन है। अवसर ठीक न जानकर उमा ने अपने प्रेम को छिपा लिया और फिर वे सखी की गोद में जाकर बैठ गईं॥3॥

*** झूठि न होइ देवरिषि बानी। सोचहिं दंपति सखीं सयानी॥ उर धरि धीर कहइ गिरिराऊ। कहहु नाथ का करिअ उपाऊ॥4॥

भावार्थ:

देवर्षि की वाणी झूठी न होगी, यह विचार कर हिमवान्, मैना और सारी चतुर सखियाँ चिन्ता करने लगीं। फिर हृदय में धीरज धरकर पर्वतराज ने कहा- हे नाथ! कहिए, अब क्या उपाय किया जाए?॥4॥

दोहा :

*** कह मुनीस हिमवंत सुनु जो बिधि लिखा लिलार। देव दनुज नर नाग मुनि कोउ न मेटनिहार॥68॥

भावार्थ:

मुनीश्वर ने कहा- हे हिमवान्! सुनो, विधाता ने ललाट पर जो कुछ लिख दिया है, उसको देवता, दानव, मनुष्य, नाग और मुनि कोई भी नहीं मिटा सकते॥68॥

चौपाई :

*** तदपि एक मैं कहउँ उपाई। होइ करै जौं दैउ सहाई॥ जस बरु मैं बरनेउँ तुम्ह पाहीं। मिलिहि उमहि तस संसय नाहीं॥1॥

भावार्थ:

तो भी एक उपाय मैं बताता हूँ। यदि दैव सहायता करें तो वह सिद्ध हो सकता है।उमा को वर तो निःसंदेह वैसा ही मिलेगा, जैसा मैंने तुम्हारे सामने वर्णन किया है॥1॥

*** जे जे बर के दोष बखाने। ते सब सिव पहिं मैं अनुमाने॥ जौं बिबाहु संकर सन होई। दोषउ गुन सम कह सबु कोई॥2॥

भावार्थ:

परन्तु मैंने वर के जो-जो दोष बतलाए हैं, मेरे अनुमान से वे सभी शिवजी में हैं। यदि शिवजी के साथ विवाह हो जाए तो दोषों को भी सब लोग गुणों के समान ही कहेंगे॥2॥

*** जौं अहि सेज सयन हरि करहीं। बुध कछु तिन्ह कर दोषु न धरहीं॥ भानु कृसानु सर्ब रस खाहीं। तिन्ह कहँ मंद कहत कोउ नाहीं॥3॥

भावार्थ:

जैसे विष्णु भगवान शेषनाग की शय्या पर सोते हैं, तो भी पण्डित लोग उनको कोई दोष नहीं लगाते। सूर्य और अग्निदेव अच्छे-बुरे सभी रसों का भक्षण करते हैं, परन्तु उनको कोई बुरा नहीं कहता॥3॥

***सुभ अरु असुभ सलिल सब बहई। सुरसरि कोउ अपुनीत न कहई॥ समरथ कहुँ नहिं दोषु गोसाईं। रबि पावक सुरसरि की नाईं॥4॥

भावार्थ:

गंगाजी में शुभ और अशुभ सभी जल बहता है, पर कोई उन्हें अपवित्र नहीं कहता। सूर्य, अग्नि और गंगाजी की भाँति समर्थ को कुछ दोष नहीं लगता॥4॥

दोहा :

*** जौं अस हिसिषा करहिं नर जड़ बिबेक अभिमान। परहिं कलप भरि नरक महुँ जीव कि ईस समान॥69॥

भावार्थ:

यदि मूर्ख मनुष्य ज्ञान के अभिमान से इस प्रकार होड़ करते हैं, तो वे कल्पभर के लिए नरक में पड़ते हैं। भला कहीं जीव भी ईश्वर के समान (सर्वथा स्वतंत्र) हो सकता है?॥69॥

चौपाई :

*** सुरसरि जल कृत बारुनि जाना। कबहुँ न संत करहिं तेहि पाना॥ सुरसरि मिलें सो पावन जैसें। ईस अनीसहि अंतरु तैसें॥1॥

भावार्थ:

गंगा जल से भी बनाई हुई मदिरा को जानकर संत लोग कभी उसका पान नहीं करते। पर वही गंगाजी में मिल जाने पर जैसे पवित्र हो जाती है, ईश्वर और जीव में भी वैसा ही भेद है॥1॥

*** संभु सहज समरथ भगवाना। एहि बिबाहँ सब बिधि कल्याना॥ दुराराध्य पै अहहिं महेसू। आसुतोष पुनि किएँ कलेसू॥2॥

भावार्थ:

शिवजी सहज ही समर्थ हैं, क्योंकि वे भगवान हैं, इसलिए इस विवाह में सब प्रकार कल्याण है, परन्तु महादेवजी की आराधना बड़ी कठिन है, फिर भी क्लेश (तप) करने से वे बहुत जल्द संतुष्ट हो जाते हैं॥2॥

*** जौं तपु करै कुमारि तुम्हारी। भाविउ मेटि सकहिं त्रिपुरारी॥ जद्यपि बर अनेक जग माहीं। एहि कहँ सिव तजि दूसर नाहीं॥3॥

भावार्थ:

यदि तुम्हारी कन्या तप करे, तो त्रिपुरारि महादेवजी होनहार को मिटा सकते हैं। यद्यपि संसार में वर अनेक हैं, पर इसके लिए शिवजी को छोड़कर दूसरा वर नहीं है॥3॥

*** बर दायक प्रनतारति भंजन। कृपासिंधु सेवक मन रंजन॥ इच्छित फल बिनु सिव अवराधें। लहिअ न कोटि जोग जप साधें॥4॥

भावार्थ:

शिवजी वर देने वाले, शरणागतों के दुःखों का नाश करने वाले, कृपा के समुद्र और सेवकों के मन

को प्रसन्न करने वाले हैं। शिवजी की आराधना किए बिना करोड़ों योग और जप करने पर भी वांछित फल नहीं मिलता॥4॥

दोहा :

*** अस कहि नारद सुमिरि हरि गिरिजहि दीन्हि असीस। होइहि यह कल्यान अब संसय तजहु गिरीस॥70॥

भावार्थ:

ऐसा कहकर भगवान का स्मरण करके नारदजी ने पार्वती को आशीर्वाद दिया। (और कहा कि-) हे पर्वतराज! तुम संदेह का त्याग कर दो, अब यह कल्याण ही होगा॥70॥

चौपाई :

*** कहि अस ब्रह्मभवन मुनि गयऊ। आगिल चरित सुनहु जस भयऊ॥ पतिहि एकांत पाइ कह मैना। नाथ न मैं समुझे मुनि बैना॥1॥

भावार्थ:

यों कहकर नारद मुनि ब्रह्मलोक को चले गए। अब आगे जो चरित्र हुआ उसे सुनो। पतिको एकान्त में पाकर मैना ने कहा- हे नाथ! मैंने मुनि के वचनों का अर्थ नहीं समझा॥1॥

*** जौं घरु बरु कुलु होइ अनूपा। करिअ बिबाहु सुता अनुरूपा॥ न त कन्या बरु रहउ कुआरी। कंत उमा मम प्रानपिआरी॥2॥

भावार्थ:

जो हमारी कन्या के अनुकूल घर, वर और कुल उत्तम हो तो विवाह कीजिए। नहीं तो लड़की चाहे कुमारी ही रहे (मैं अयोग्य वर के साथ उसका विवाह नहीं करना चाहती), क्योंकि हे स्वामिन्! पार्वती मुझको प्राणों के समान प्यारी है॥2॥

*** जौं न मिलिहि बरु गिरिजहि जोगू। गिरि जड़ सहज कहिहि सबु लोगू॥ सोइ बिचारि पति करेहु बिबाहू। जेहिं न बहोरि होइ उर दाहू॥3॥

भावार्थ:

यदि पार्वती के योग्य वर न मिला तो सब लोग कहेंगे कि पर्वत स्वभाव से ही जड़ (मूर्ख) होते हैं। हे स्वामी! इस बात को विचारकर ही विवाह कीजिएगा, जिसमें फिर पीछे हृदय में सन्ताप न हो॥3॥

*** अस कहि परी चरन धरि सीसा। बोले सहित सनेह गिरीसा॥ बरु पावक प्रगटै ससि माहीं। नारद बचनु अन्यथा नाहीं॥4॥

भावार्थ:

इस प्रकार कहकर मैना पति के चरणों पर मस्तक रखकर गिर पड़ीं। तब हिमवान् ने प्रेम से कहा- चाहे चन्द्रमा में अग्नि प्रकट हो जाए, पर नारदजी के वचन झूठे नहीं हो सकते॥4॥

दोहा :

*** प्रिया सोचु परिहरहु सबु सुमिरहु श्रीभगवान। पारबतिहि निरमयउ जेहिं सोइ करिहि कल्यान॥71॥

भावार्थ:

हे प्रिये! सब सोच छोड़कर श्री भगवान का स्मरण करो, जिन्होंने पार्वती को रचा है, वे ही कल्याण करेंगे॥71॥

चौपाई :

*** अब जौं तुम्हहि सुता पर नेहू। तौ अस जाइ सिखावनु देहू॥ करै सो तपु जेहिं मिलहिं महेसू। आन उपायँ न मिटिहि कलेसू॥1॥

भावार्थ:

अब यदि तुम्हें कन्या पर प्रेम है, तो जाकर उसे यह शिक्षा दो कि वह ऐसा तप करे, जिससे शिवजी मिल जाएँ। दूसरे उपाय से यह क्लेश नहीं मिटेगा॥1॥

*** नारद बचन सगर्भ सहेतू। सुंदर सब गुन निधि बृषकेतू॥ अस बिचारि तुम्ह तजहु असंका। सबहि भाँति संकरु अकलंका॥2॥

भावार्थ:

नारदजी के वचन रहस्य से युक्त और सकारण हैं और शिवजी समस्त सुंदर गुणों के भण्डारहैं। यह विचारकर तुम (मिथ्या) संदेह को छोड़ दो। शिवजी सभी तरह से निष्कलंक हैं॥2॥

*** सुनि पति बचन हरषि मन माहीं। गई तुरत उठि गिरिजा पाहीं॥ उमहि बिलोकि नयन भरे बारी। सहित सनेह गोद बैठारी॥3॥

भावार्थ:

पति के वचन सुन मन में प्रसन्न होकर मैना उठकर तुरंत पार्वती के पास गईं।पार्वती को देखकर उनकी आँखों में आँसू भर आए। उसे स्नेह के साथ गोद में बैठा लिया॥3॥

दोहा :

*** बारहिं बार लेति उर लाई। गदगद कंठ न कछु कहि जाई॥ जगत मातु सर्बग्य भवानी। मातु सुखद बोलीं मृदु बानी॥4॥

भावार्थ:

फिर बार-बार उसे हृदय से लगाने लगीं। प्रेम से मैना का गला भर आया, कुछ कहा नहीं जाता। जगज्जननी भवानीजी तो सर्वज्ञ ठहरीं। (माता के मन की दशा को जानकर) वे माता को सुख देने वाली कोमल वाणी से बोलीं-॥4॥

दोहा :

*** सुनहि मातु मैं दीख अस सपन सुनावउँ तोहि। सुंदर गौर सुबिप्रबर अस उपदेसेउ मोहि॥72॥

भावार्थ:

माँ! सुन, मैं तुझे सुनाती हूँ मैंने ऐसा स्वप्न देखा है कि मुझे एक सुंदर गौरवर्ण श्रेष्ठ ब्राह्मण ने

ऐसा उपदेश दिया है-॥72॥

चौपाई :

*** करहि जाइ तपु सैलकुमारी। नारद कहा सो सत्य बिचारी॥ मातु पितहि पुनि यह मत भावा। तपु सुखप्रद दुख दोष नसावा॥1॥

भावार्थ:

हे पार्वती! नारदजी ने जो कहा है, उसे सत्य समझकर तू जाकर तप कर। फिर यह बात तेरे माता-पिता को भी अच्छी लगी है। तप सुख देने वाला और दुःख-दोष का नाश करने वाला है॥1॥

*** तपबल रचइ प्रपंचु बिधाता। तपबल बिष्नु सकल जग त्राता॥ तपबल संभु करहिं संघारा। तपबल सेषु धरइ महिभारा॥2॥

भावार्थ:

तप के बल से ही ब्रह्मा संसार को रचते हैं और तप के बल से ही बिष्णु सारे जगत का पालन करते हैं। तप के बल से ही शम्भु (रुद्र रूप से) जगत का संहार करते हैं और तप के बल से ही शेषजी पृथ्वी का भार धारण करते हैं॥2॥

*** तप अधार सब सृष्टि भवानी। करहि जाइ तपु अस जियँ जानी॥ सुनत बचन बिसमित महतारी। सपन सुनायउ गिरिहि हँकारी॥3॥

भावार्थ:

हे भवानी! सारी सृष्टि तप के ही आधार पर है। ऐसा जी में जानकर तू जाकर तप कर। यह बात सुनकर माता को बड़ा अचरज हुआ और उसने हिमवान् को बुलाकर वह स्वप्न सुनाया॥3॥

दोहा :

*** मातु पितहि बहुबिधि समुझाई। चलीं उमा तप हित हरषाई॥ प्रिय परिवार पिता अरु माता। भए बिकल मुख आव न बाता॥4॥

भावार्थ:

माता-पिता को बहुत तरह से समझाकर बड़े हर्ष के साथ पार्वतीजी तप करने के लिए चलीं। प्यारे कुटुम्बी, पिता और माता सब व्याकुल हो गए। किसी के मुँह से बात नहीं निकलती॥4॥

दोहा :

***बेदसिरा मुनि आइ तब सबहि कहा समुझाइ। पारबती महिमा सुनत रहे प्रबोधहि पाइ॥73॥

भावार्थ:

तब वेदशिरा मुनि ने आकर सबको समझाकर कहा। पार्वतीजी की महिमा सुनकर सबको समाधान हो गया॥73॥

चौपाई :

*** उर धरि उमा प्रानपति चरना। जाइ बिपिन लागीं तपु करना॥ अति सुकुमार न तनु तप जोगू। पति पद सुमिरि तजेउ सबु भोगू॥1॥

भावार्थ:

प्राणपति (शिवजी) के चरणों को हृदय में धारण करके पार्वतीजी वन में जाकर तप करने लगीं। पार्वतीजी का अत्यन्त सुकुमार शरीर तप के योग्य नहीं था, तो भी पति के चरणों का स्मरण करके उन्होंने सब भोगों को तज दिया॥1॥

*** नित नव चरन उपज अनुरागा। बिसरी देह तपहिं मनु लागा॥ संबत सहस मूल फल खाए। सागु खाइ सत बरष गवाँए॥2॥

भावार्थ:

स्वामी के चरणों में नित्य नया अनुराग उत्पन्न होने लगा और तप में ऐसा मन लगा कि शरीर की सारी सुध बिसर गई। एक हजार वर्ष तक उन्होंने मूल और फल खाए, फिर सौ वर्ष साग खाकर बिताए॥2॥

*** कछु दिन भोजनु बारि बतासा। किए कठिन कछु दिन उपबासा॥ बेल पाती महि परइ सुखाई। तीनि सहस संबत सोइ खाई॥3॥

भावार्थ:

कुछ दिन जल और वायु का भोजन किया और फिर कुछ दिन कठोर उपवास किए, जो बेल पत्र सूखकर पृथ्वी पर गिरते थे, तीन हजार वर्ष तक उन्हीं को खाया॥3॥

*** पुनि परिहरे सुखानेउ परना। उमहि नामु तब भयउ अपरना॥ देखि उमहि तप खीन सरीरा। ब्रह्मगिरा भै गगन गभीरा॥4॥

भावार्थ:

फिर सूखे पर्ण (पत्ते) भी छोड़ दिए, तभी पार्वती का नाम 'अपर्णा' हुआ। तप से उमा का शरीर क्षीण देखकर आकाश से गंभीर ब्रह्मवाणी हुई॥4॥

दोहा :

*** भयउ मनोरथ सुफल तव सुनु गिरिराजकुमारि। परिहरु दुसह कलेस सब अब मिलिहहिं त्रिपुरारि॥74॥

भावार्थ:

हे पर्वतराज की कुमारी! सुन, तेरा मनोरथ सफल हुआ। तू अब सारे असह्य क्लेशों को (कठिन तप को) त्याग दे। अब तुझे शिवजी मिलेंगे॥74॥

चौपाई :

*** अस तपु काहुँ न कीन्ह भवानी। भए अनेक धीर मुनि ग्यानी॥ अब उर धरहु ब्रह्म बर बानी। सत्य सदा संतत सुचि जानी॥1॥

भावार्थ:

हे भवानी! धीर, मुनि और ज्ञानी बहुत हुए हैं पर ऐसा (कठोर) तप किसी ने नहीं किया। अब तू इस श्रेष्ठ ब्रह्मा की वाणी को सदा सत्य और निरंतर पवित्र जानकर अपने हृदय में धारण

कर॥1॥
*** आवै पिता बोलावन जबहीं। हठ परिहरि घर जाएहु तबहीं॥ मिलहिं तुम्हहि जब सप्त रिषीसा। जानेहु तब प्रमान बागीसा॥2॥
भावार्थ:
जब तेरे पिता बुलाने को आवें, तब हठ छोड़कर घर चली जाना और जब तुम्हें सप्तर्षि मिलें तब इस वाणी को ठीक समझना॥2॥
*** सुनत गिरा बिधि गगन बखानी। पुलक गात गिरिजा हरषानी॥ उमा चरित सुंदर मैं गावा। सुनहु संभु कर चरित सुहावा॥3॥
भावार्थ:
(इस प्रकार) आकाश से कही हुई ब्रह्मा की वाणी को सुनते ही पार्वतीजी प्रसन्न हो गईं और (हर्ष के मारे) उनका शरीर पुलकित हो गया। (याज्ञवल्क्यजी भरद्वाजजी से बोले कि-) मैंने पार्वती का सुंदर चरित्र सुनाया, अब शिवजी का सुहावना चरित्र सुनो॥3॥
*** जब तें सतीं जाइ तनु त्यागा। तब तें सिव मन भयउ बिरागा॥ जपहिं सदा रघुनायक नामा। जहँ तहँ सुनहिं राम गुन ग्रामा॥4॥
भावार्थ:
जब से सती ने जाकर शरीर त्याग किया, तब से शिवजी के मन में वैराग्य हो गया। वे सदा श्री रघुनाथजी का नाम जपने लगे और जहाँ-तहाँ श्री रामचन्द्रजी के गुणों की कथाएँ सुनने लगे॥4॥
दोहा :
*** चिदानंद सुखधाम सिव बिगत मोह मद काम। बिचरहिं महि धरि हृदयँ हरि सकल लोक अभिराम॥75॥
भावार्थ:
चिदानन्द, सुख के धाम, मोह, मद और काम से रहित शिवजी सम्पूर्ण लोकों को आनंद देने वाले भगवान श्री हरि (श्री रामचन्द्रजी) को हृदय में धारण कर (भगवान के ध्यान में मस्त हुए) पृथ्वी पर विचरने लगे॥75॥
चौपाई :
*** कतहुँ मुनिन्ह उपदेसहिं ग्याना। कतहुँ राम गुन करहिं बखाना॥ जदपि अकाम तदपि भगवाना। भगत बिरह दुख दुखित सुजाना॥1॥
भावार्थ:
वे कहीं मुनियों को ज्ञान का उपदेश करते और कहीं श्री रामचन्द्रजी के गुणोंका वर्णन करते थे। यद्यपि सुजान शिवजी निष्काम हैं, तो भी वे भगवान अपने भक्त (सती) के वियोग के दुःख से दुःखी हैं॥1॥
*** एहि बिधि गयउ कालु बहु बीती। नित नै होइ राम पद प्रीती॥ नेमु प्रेमु संकर कर देखा।

अबिचल हृदयँ भगति कै रेखा॥2॥

भावार्थ:

इस प्रकार बहुत समय बीत गया। श्री रामचन्द्रजी के चरणों में नित नई प्रीति हो रही है। शिवजी के (कठोर) नियम, (अनन्य) प्रेम और उनके हृदय में भक्ति की अटल टेक को (जब श्री रामचन्द्रजी ने) देखा॥2॥

*** प्रगटे रामु कृतग्य कृपाला। रूप सील निधि तेज बिसाला॥ बहु प्रकार संकरहि सराहा। तुम्ह बिनु अस ब्रतु को निरबाहा॥3॥

भावार्थ:

तब कृतज्ञ (उपकार मानने वाले), कृपालु, रूप और शील के भण्डार, महान् तेजपुंज भगवान श्री रामचन्द्रजी प्रकट हुए। उन्होंने बहुत तरह से शिवजी की सराहनाकी और कहा कि आपके बिना ऐसा (कठिन) व्रत कौन निबाह सकता है॥3॥

*** बहु बिधि राम सिवहि समुझावा। पारबती कर जन्मु सुनावा॥ अति पुनीत गिरिजा कै करनी। बिस्तर सहित कृपानिधि बरनी॥4॥

भावार्थ:

श्री रामचन्द्रजी ने बहुत प्रकार से शिवजी को समझाया और पार्वतीजी का जन्म सुनाया। कृपानिधान श्री रामचन्द्रजी ने विस्तारपूर्वक पार्वतीजी की अत्यन्त पवित्र करनी का वर्णन किया॥4॥ **अगला पेज...**

रामचरित्मानस

बालकाण्ड